IJARSCT
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
ISSN: 2581-9429
Volume 3, Issue 1, March 2020
Impact Factor: 4.819

onk e ukjh Lo:i dk fooj.k

Mk- jhrk flg

vfl0 izkQslj bfrgkl

ifMr jkeyk[ku “kqDy jktdh; ih th dkyst] vkykiqj] vEcsMdjuxj

ritasingh806@gmail.com

lkjka'k

प्रस्तुत शोध–पत्र 'वेदों में नारी स्वरूप' वैदिक वाड़म्य के आधार पर नारी की सामाजिक, धार्मिक, शैक्षिक एवं दार्शनिक स्थिति का समग्र विश्लेषण प्रस्तुत करता है। भारतीय संस्कृति के मूल स्रोत के रूप में वेद न केवल आध्यात्मिक चिंतन के ग्रंथ हैं, बल्कि वे उस काल की सामाजिक संरचना और मूल्य–व्यवस्था के भी प्रमाणिक दस्तावेज हैं। इस अध्ययन में यह प्रतिपादित किया गया है कि वैदिक काल में नारी को जीवन के विविध क्षेत्रों में सम्मानजनक स्थान प्राप्त था। पत्नी को 'सहधर्मिणी' और 'अर्धांगिनी' के रूप में स्वीकार करना इस बात का सूचक है कि स्त्री–पुरुष संबंध प्रतिस्पर्धा पर नहीं, बल्कि सहयोग और समन्वय पर आधारित थे। शोध में विशेष रूप से ऋग्वेद, यजुर्वेद और अथर्ववेद के मंत्रों का विश्लेषण करते हुए यह स्पष्ट किया गया है कि स्त्रियों को शिक्षा, ब्रह्मचर्य, वेदाध्ययन, यज्ञीय अनुष्ठान तथा सामाजिक निर्णयों में सहभागिता का अधिकार प्राप्त था। ऋग्वेद में उल्लिखित ऋषिकाएँ–अपाला, घोषा, लोपामुद्रा आदि–इस तथ्य का प्रमाण हैं कि स्त्रियाँ मंत्रद्रष्टा और दार्शनिक चिंतन की अधिकारी थीं। अथर्ववेद में कन्या के ब्रह्मचर्य और शिक्षा के उपरांत विवाह की संस्तुति तथा वधू को 'सम्राज्ञी' कहकर संबोधित करना नारी के सम्मान और अधिकारबोध को रेखांकित करता है।

दार्शनिक स्तर पर भी वैदिक साहित्य में नारी को सृजन–शक्ति और ज्ञान की अधिष्ठात्री के रूप में प्रतिष्ठित किया गया है। वृहदारण्यकोपनिषद् में स्त्री–पुरुष की उत्पत्ति और समता का जो विवेचन मिलता है, वह नारी को ब्रह्मविद्या और आध्यात्मिक अनुभूति की समान अधिकारी सिद्ध करता है। देवियों–उषा, अदिति, सरस्वती–के माध्यम से नारी को प्रकाश, शक्ति और विद्या का प्रतीक माना गया है, जो उसके दार्शनिक महत्त्व को और अधिक सुदृढ़ करता है। यद्यपि कुछ वैदिक एवं ब्राह्मण ग्रंथों में पितृ सत्तात्मक संकेतों के उदाहरण भी मिलते हैं, तथापि समग्र वैदिक परिप्रेक्ष्य में नारी की स्थिति सम्मानजनक और सशक्त प्रतीत होती है। यह शोध–पत्र पूर्ववर्ती अध्ययनों और आधुनिक नारीवादी विमर्श के संदर्भ में वैदिक नारी की स्थिति का तुलनात्मक एवं समालोचनात्मक विश्लेषण प्रस्तुत करता है। निष्कर्षतः यह अध्ययन इस तथ्य को स्थापित करता है कि समानता, शिक्षा–अधिकार और सामाजिक सहभागिता के सिद्धांत भारतीय परंपरा में प्राचीन काल से ही विद्यमान रहे हैं। इस प्रकार 'वेदों में नारी स्वरूप' का यह अध्ययन न केवल ऐतिहासिक दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है, बल्कि समकालीन नारी–विमर्श और सामाजिक पुनर्विचार के लिए भी प्रेरणास्रोत सिद्ध होता है।

dh&oMZ ¼Keywords½%

वैदिक नारी स्वरूप,नारी–अधिकार, वैदिक शिक्षा और ब्रह्मचर्य, ऋषिकाएँ और वेदाध्ययन, यज्ञीय परंपरा,स्त्री–पुरुष समता, वैदिक सामाजिक संरचना, प्राचीन भारतीय नारी विमर्श

IJARSCT

International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology

International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal

ISSN: 2581-9429 Volume 3, Issue 1, March 2020 Impact Factor: 4.819

1- çLrkouk

भारतीय सभ्यता और संस्कृति के प्राचीनतम स्रोत के रूप में वेद को सर्वोच्च स्थान प्राप्त है। वेद केवल धार्मिक ग्रंथ नहीं हैं, बल्कि वे उस कालखंड के सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक और दार्शनिक जीवन के प्रामाणिक दस्तावेज भी हैं। वैदिक साहित्य में नारी का स्वरूप बहुआयामी और सम्मानित रूप में प्रस्तुत हुआ है। नारी को केवल गृहस्थ जीवन की परिधि तक सीमित न रखकर उसे ज्ञान, धर्म, कर्म और आध्यात्मिक साधना के क्षेत्र में भी सक्रिय और सहभागी माना गया है। अतः वेदों में नारी की स्थिति का अध्ययन भारतीय समाज की मूल संरचना और मूल्यबोध को समझने की दृष्टि से अत्यंत महत्त्वपूर्ण है।

वैदिक काल में नारी को 'सहधर्मिणी', 'अर्धांगिनी' तथा 'गृहलक्ष्मी' के रूप में प्रतिष्ठा प्राप्त थी। ऋग्वेद में अनेक सूक्त ऐसे हैं जिनकी रचनाकार स्त्रियाँ मानी गई हैं, जैसे घोषा, लोपामुद्रा और अपाला। इससे यह प्रमाणित होता है कि उस युग में स्त्रियों को वेदाध्ययन, यज्ञीय कर्म तथा दार्शनिक विमर्श में सहभागिता का अवसर प्राप्त था। विवाह, शिक्षा और सामाजिक निर्णयों में भी स्त्री की भूमिका महत्वपूर्ण थी। 'समानी व आकूतिः' जैसे मंत्रों के माध्यम से स्त्री–पुरुष के समन्वित और समान भागीदारी वाले जीवन का आदर्श प्रस्तुत किया गया है।

वेदों में नारी का स्वरूप केवल सामाजिक इकाई के रूप में नहीं, अपितु दैवी शक्ति के प्रतीक के रूप में भी चित्रित हुआ है। उषा, सरस्वती, अदिति आदि देवियों के माध्यम से नारी को सृजन, ज्ञान और अनंतता की अधिष्ठात्री शक्ति माना गया है। इस प्रकार नारी को शक्ति, प्रज्ञा और मातृत्व के समन्वित रूप में देखा गया है। यह दृष्टिकोण भारतीय चिंतन परंपरा में नारी के प्रति सम्मान और श्रद्धा के भाव को दर्शाता है।

हालाँकि वैदिक समाज पूर्णतः समानतावादी था या नहीं, इस विषय में विद्वानों में मतभेद पाए जाते हैं। कुछ स्थलों पर पितृसत्तात्मक प्रवृत्तियों के संकेत भी मिलते हैं, किंतु समग्र रूप से वैदिक वाड़्मय में नारी की प्रतिष्ठा, स्वतंत्रता और बौद्धिक क्षमता का स्पष्ट प्रतिपादन हुआ है। अतः 'वेदों में नारी स्वरूप' का अध्ययन न केवल ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में, बल्कि समकालीन नारी विमर्श के संदर्भ में भी अत्यंत प्रासंगिक है।

इस शोध–पत्र का उद्देश्य वैदिक साहित्य के मूल मंत्रों और वैदिक समाज की संरचना के आधार पर नारी की सामाजिक, धार्मिक, शैक्षिक और दार्शनिक स्थिति का सम्यक विश्लेषण करना है। साथ ही यह अध्ययन यह स्पष्ट करने का प्रयास करेगा कि वैदिक काल में नारी को किस सीमा तक स्वतंत्रता और अधिकार प्राप्त थे तथा उस आदर्श की समकालीन समाज में क्या प्रासंगिकता है।

2- 'kkèk leL;k ¼Research Problem½

'वेदों में नारी स्वरूप' विषय भारतीय प्राचीन इतिहास, समाजशास्त्र और नारी–अध्ययन के अंतर्गत एक महत्वपूर्ण किंतु विवादास्पद प्रश्न के रूप में उपस्थित होता है। वेद में नारी के संबंध में जो चित्र उभरता है, वह बहुआयामी है–एक ओर नारी को सहधर्मिणी, विदुषी, ऋषिका एवं यज्ञकर्म में सहभागी के रूप में प्रतिष्ठा प्राप्त है, तो दूसरी ओर कुछ मंत्रों और सामाजिक संकेतों में पितृसत्तात्मक संरचना की झलक भी मिलती है। इस द्वंद्वात्मक स्थिति के कारण यह प्रश्न शोध की दृष्टि से अत्यंत प्रासंगिक हो जाता है कि वैदिक काल में नारी की वास्तविक सामाजिक, धार्मिक और बौद्धिक स्थिति क्या थी?

विशेषतः ऋग्वेद में घोषा, लोपामुद्रा, अपाला जैसी स्त्री ऋषियों का उल्लेख नारी की बौद्धिक सक्रियता को प्रमाणित करता है, किंतु क्या यह स्थिति व्यापक सामाजिक यथार्थ को दर्शाती है या केवल विशिष्ट वर्ग तक सीमित थी–यह एक गंभीर

अनुसंधानात्मक प्रश्न है। इसी प्रकार, वैदिक साहित्य में वर्णित विवाह–संस्कार, स्त्री–शिक्षा, उत्तराधिकार और धार्मिक अनुष्ठानों में स्त्री की सहभागिता के संदर्भ में विभिन्न विद्वानों के मतों में भिन्नता पाई जाती है।

समस्या का एक अन्य पक्ष यह है कि वैदिक मंत्रों की व्याख्या समय–समय पर भिन्नदृष्टिकोणों से की गई है। परंपरागत व्याख्याएँ नारी की गौरवपूर्ण स्थिति को रेखांकित करती हैं, जबकि आधुनिक नारीवादी विश्लेषण कुछ स्थलों पर अंतर्निहित लैंगिक असमानताओं को इंगित करता है। अतः मूल स्रोतों के आधार पर निष्पक्ष एवं तुलनात्मक अध्ययन की आवश्यकता अनुभव की जाती है, जिससे यह स्पष्ट हो सके कि वैदिक नारी की स्थिति आदर्शवादी थी या यथार्थपरक।

इस प्रकार, इस शोध की मूल समस्या यह है कि वैदिक वाङ्मय में वर्णित नारी स्वरूप का सम्यक एवं आलोचनात्मक विश्लेषण करते हुए यह निर्धारित किया जाए कि वैदिक समाज में नारी को वास्तविक रूप में कितनी सामाजिक स्वतंत्रता, धार्मिक अधिकार और बौद्धिक मान्यता प्राप्त थी, तथा इन तथ्यों का समकालीन नारी विमर्श के संदर्भ में क्या महत्व है।

3- lkfgR; leh{kk ¼Literature Review½

'वेदों में नारी स्वरूप' विषय पर उपलब्ध साहित्य का अवलोकन करने से स्पष्ट होता है कि वैदिक वाङ्मय में नारी की स्थिति को लेकर विद्वानों में व्यापक विमर्श रहा है। एक ओर परंपरागत विद्वान वेदों में नारी को अत्यंत गरिमामय, शिक्षित और अधिकार–संपन्न मानते हैं, तो दूसरी ओर कुछ आधुनिक चिंतक वैदिक समाज में निहित पितृसत्तात्मक प्रवृत्तियों की ओर संकेत करते हैं। प्रस्तुत शोध के संदर्भ में उपलब्ध लेखों, शोधपत्रों और ग्रंथों का अध्ययन इस विषय की बहुआयामी समझ विकसित करने में सहायक है।

डॉ. पद्मा द्वारा लिखित लेख "वेदों में नारी की भूमिका" में वेद को नारी के लिए अत्यंत सम्मानजनक ग्रंथ के रूप में प्रस्तुत किया गया है। लेखिका के अनुसार वेदों में स्त्री को शिक्षा, शील, गुण, कर्तव्य और अधिकारों से संपन्न बताया गया है तथा उसे यज्ञीय, विदुषी, देवी, सरस्वती और इन्द्राणी जैसे विशेषणों से विभूषित किया गया है। लेख में यजुर्वेद और अथर्ववेद के मंत्रों के आधार पर यह प्रतिपादित किया गया है कि स्त्रियों को शासन, राजनीति, युद्ध तथा शिक्षा के क्षेत्र में भी सक्रिय भूमिका प्राप्त थी। यह दृष्टिकोण वैदिक नारी को एक सशक्त एवं स्वतंत्र व्यक्तित्व के रूप में स्थापित करता है।

डॉ. माधवी शर्मा के लेख "वेदों में स्त्रीवाद" में स्त्री–पुरुष समन्वय को समाज की आधारशिला माना गया है। उन्होंने वैदिक साहित्य में प्रयुक्त 'अर्धांगिनी' और 'दंपत्ति' जैसे शब्दों की व्याख्या करते हुए नारी और पुरुष की समानता को रेखांकित किया है। शतपथ ब्राह्मण तथा वृहदारण्यकोपनिषद् के उद्धरणों के माध्यम से यह स्पष्ट किया गया है कि पत्नी को पुरुष का आधा अंग माना गया है, जिससे आधिपत्य की भावना का निषेध होता है। इस अध्ययन में नारी के गृहिणीपद, मातृपद और सहचरीपद को सम्मानजनक सामाजिक स्थान के रूप में प्रस्तुत किया गया है।

डॉ. ऋतु शुक्ला द्वारा प्रस्तुत शोधपत्र "वैदिक काल में नारी–अधिकार" में वैदिक संहिता काल को नारी की स्थिति का स्वर्णिम युग बताया गया है। लेखिका के अनुसार उस काल में स्त्रियों को उपनयन संस्कार, वेदाध्ययन तथा ब्रह्मचर्य का अधिकार प्राप्त था। ऋग्वेद के मंत्रों तथा उपनिषदों के संदर्भ से यह सिद्ध करने का प्रयास किया गया है कि स्त्रियाँ ब्रह्मविद्या की अधिकारी थीं। विशेष रूप से वृहदारण्यकोपनिषद् में विदुषी पुत्री की कामना का उल्लेख नारी–शिक्षा के महत्व को दर्शाता है।

इतिहासकार Radha Kumud Mukherjee ने भी अपने अध्ययन में यह स्वीकार किया है कि ऋग्वैदिक काल में स्त्रियों को उच्च ज्ञान तक समान पहुँच प्राप्त थी। उनके अनुसार वैदिक साहित्य में स्त्रियों की बौद्धिक क्षमता और आध्यात्मिक अधिकारों के

IJARSCT
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
ISSN: 2581-9429 Volume 3, Issue 1, March 2020 Impact Factor: 4.819

पर्याप्त प्रमाण मिलते हैं। इसी प्रकार एच.सी. उपाध्याय ने भी भारतीय समाज में स्त्री की स्थिति का विश्लेषण करते हुए वैदिक युग को अपेक्षाकृत उन्नत काल माना है।

डॉ. मालती शर्मा की कृति "वैदिक संहिताओं में नारी" में वैदिक मंत्रों के भाष्य के आधार पर नारी की सामाजिक एवं धार्मिक भूमिका का विस्तृत विवेचन किया गया है। इस ग्रंथ में ऋषिकाओं—अपाला, घोषा, लोपा मुद्रा, विश्ववारा आदि—का उल्लेख करते हुए यह प्रतिपादित किया गया है कि स्त्रियाँ मंत्रद्रष्टा के रूप में प्रतिष्ठित थीं। इससे यह सिद्ध होता है कि नारी केवल सामाजिक संरचना का अंग नहीं थी, बल्कि वैदिक ज्ञान—परंपरा की सक्रिय सहभागी भी थी।

हालाँकि, कुछ ग्रंथों—जैसे ऐतरेय ब्राह्मण और अथर्वसंहिता के कुछ अंशों—में कन्या के प्रति अपेक्षाकृत उदासीन दृष्टिकोण के संकेत भी मिलते हैं। इन विरोधाभासी प्रमाणों के कारण विद्वानों के मध्य मतभेद उत्पन्न होते हैं। आधुनिक नारीवादी चिंतन इन स्थलों की पुनर्व्याख्या करते हुए यह प्रश्न उठाता है कि क्या वैदिक युग की समानता सार्वभौमिक थी या केवल विशिष्ट वर्गों तक सीमित।

समग्रतः उपलब्ध साहित्य यह संकेत देता है कि वैदिक काल में नारी को शिक्षा, धर्म और सामाजिक जीवन में महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त था, किंतु विभिन्न स्रोतों में प्राप्त विविध संकेतों के कारण इस विषय में एकरूप निष्कर्ष निकालना सरल नहीं है। अतः प्रस्तुत शोध का उद्देश्य पूर्ववर्ती अध्ययनों का समालोचनात्मक परीक्षण करते हुए मूल वैदिक मंत्रों के आधार पर नारी स्वरूप की संतुलित और तर्कसंगत व्याख्या प्रस्तुत करना है, जिससे आदर्श और यथार्थ के मध्य अंतर स्पष्ट हो सके।

4· e|y fopkj

1· èkkfeZd vu|"Bku] ;K vk|j _f"kdkvk dh ij|ijk

वैदिक समाज में नारी की धार्मिक भूमिका अत्यंत महत्त्वपूर्ण और गरिमामयी थी। वेद में वर्णित यज्ञीय व्यवस्था में पत्नी को 'सहधर्मिणी' के रूप में मान्यता दी गई है। वैदिक परंपरा के अनुसार पति और पत्नी दोनों मिलकर ही यज्ञ एवं अन्य धार्मिक अनुष्ठानों को संपन्न करते थे; पत्नी की अनुपस्थिति में यज्ञ अपूर्ण माना जाता था। इससे स्पष्ट है कि धार्मिक जीवन में स्त्री की सहभागिता अनिवार्य और संस्थागत थी।

विशेष रूप से ऋग्वेद में अनेक मंत्र ऐसे हैं जिनकी दृष्टा स्त्रियाँ थीं। अपाला, घोषा, लोपा मुद्रा, विश्ववारा आदि ऋषिकाओं का उल्लेख इस तथ्य का प्रमाण है कि स्त्रियाँ केवल अनुष्ठानों की सहभागी ही नहीं, बल्कि वेद—मंत्रों की रचयिता और आध्यात्मिक अनुभूति की अधिकारी भी थीं। यह स्थिति नारी की उच्च बौद्धिक और आध्यात्मिक क्षमता को अभिव्यक्त करती है।

अथर्ववेद में वधू को 'यज्ञीय' कहा गया है, अर्थात् वह स्वयं यज्ञ के समान पूजनीय और पवित्र है। यह उपमा नारी को धार्मिक दृष्टि से उच्चतम सम्मान प्रदान करती है। साथ ही उषा, अदिति और सरस्वती जैसी देवियों के माध्यम से नारी को सृजन, ज्ञान और शक्ति की अधिष्ठात्री के रूप में प्रतिष्ठित किया गया है।

इस प्रकार धार्मिक अनुष्ठानों और ऋषिकाओं की परंपरा का अध्ययन यह स्पष्ट करता है कि वैदिक युग में नारी केवल गृहस्थ जीवन तक सीमित नहीं थी, बल्कि वह आध्यात्मिक परंपरा की संवाहक, वैदिक ज्ञान की द्रष्टा और धार्मिक संस्कृति की सशक्त आधारशिला थी।

IJARSCT
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
ISSN: 2581-9429 Volume 3, Issue 1, March 2020 Impact Factor: 4.819

2- ofnd okME; e ukjh dh nk'kfud voèkkj.kk

वैदिक साहित्य में नारी को केवल सामाजिक अस्तित्व के रूप में नहीं, बल्कि दार्शनिक एवं आध्यात्मिक सत्ता के रूप में भी प्रतिष्ठित किया गया है। वेद में नारी को सृष्टि–चक्र की अनिवार्य कड़ी और सृजन–शक्ति के प्रतीक के रूप में देखा गया है। नारी के बिना पुरुष की पूर्णता असंभव मानी गई है, जिससे स्त्री–पुरुष संबंध को प्रतिस्पर्धा नहीं, बल्कि समन्वय और परस्पर–निर्भरता के आधार पर समझा गया।

वृहदारण्यकोपनिषद् में वर्णित सृष्टि–विवेचन में पुरुष के द्विभाजन से 'पति' और 'पत्नी' की उत्पत्ति का उल्लेख मिलता है, जो स्त्री–पुरुष की समान आध्यात्मिक सत्ता को अभिव्यक्त करता है। इसी प्रकार 'अर्धांगिनी' की अवधारणा यह स्पष्ट करती है कि पत्नी को पुरुष का आधा अंग माना गया, जिससे किसी भी प्रकार की हीन–श्रेष्ठता की धारणा का खंडन होता है।

ऋग्वेद में नारी को 'ब्रह्मा' की संज्ञा तक दी गई है, जो उसके ज्ञानस्वरूप और सृजनात्मक शक्ति का द्योतक है। देवियों–उषा, अदिति, सरस्वती – के माध्यम से नारी को प्रकाश, अनंतता और विद्या की अधिष्ठात्री शक्ति के रूप में चित्रित किया गया है। यह दार्शनिक दृष्टिकोण नारी को केवल जैविक या पारिवारिक भूमिका तक सीमित नहीं रखता, बल्कि उसे ब्रह्मविद्या और आध्यात्मिक अनुभूति की अधिकारी के रूप में स्थापित करता है।

अतः वैदिक वाङ्मय में नारी की दार्शनिक अवधारणा समता, सहअस्तित्व और सृजन–शक्ति के सिद्धांत पर आधारित है। यह दृष्टि नारी को जीवन और ब्रह्मांड की संरचना में अनिवार्य एवं सम्मानित स्थान प्रदान करती है, जो वैदिक समाज के मूल मूल्यबोध को प्रतिबिंबित करती है।

3- f'k{kk] miu;u ,o onkè;;u e L=h dh lgHkkfxrk

वैदिक काल में नारी को शिक्षा के क्षेत्र में उल्लेखनीय अधिकार प्राप्त थे। वेद में ऐसे अनेक संकेत मिलते हैं जिनसे स्पष्ट होता है कि स्त्रियाँ वेदाध्ययन, ब्रह्मचर्य और दार्शनिक चिंतन की अधिकारी थीं। कन्याओं को भी उपनयन संस्कार से संस्कारित कर अध्ययन के योग्य बनाया जाता था, जिससे यह सिद्ध होता है कि शिक्षा केवल पुरुषों तक सीमित नहीं थी।

विशेषतः अथर्ववेद (11-5-18) में उल्लेख मिलता है कि कन्या ब्रह्मचर्य का पालन कर विद्या प्राप्त करने के पश्चात् ही विवाह करे। यह मंत्र स्त्री–शिक्षा के महत्व को स्पष्ट रूप से स्थापित करता है। इससे यह प्रमाणित होता है कि वैदिक समाज में कन्या को बौद्धिक परिपक्वता के साथ जीवन–निर्णय लेने का अवसर दिया जाता था।

ऋग्वेद में अपाला, घोषा, लोपामुद्रा और विश्ववारा जैसी ऋषिकाओं का उल्लेख नारी की उच्च शैक्षिक और आध्यात्मिक उपलब्धियों का साक्ष्य प्रस्तुत करता है। ये स्त्रियाँ केवल शिक्षित ही नहीं थीं, बल्कि मंत्रद्रष्टा और दार्शनिक विचारक भी थीं। इससे स्पष्ट होता है कि वैदिक युग में स्त्रियों को ज्ञानार्जन और बौद्धिक अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता प्राप्त थी।

उपनिषदों में भी विदुषी पुत्री की कामना का उल्लेख मिलता है, जो यह दर्शाता है कि समाज में शिक्षित स्त्री को सम्मान प्राप्त था। इस प्रकार शिक्षा, उपनयन और वेदाध्ययन की परंपरा में स्त्री की सहभागिता वैदिक समाज की प्रगतिशील दृष्टि को प्रमाणित करती है, जहाँ ज्ञान को लिंग–भेद से परे सार्वभौमिक अधिकार माना गया।

IJARSCT

International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology

International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal

ISSN: 2581-9429 Volume 3, Issue 1, March 2020 Impact Factor: 4.819

4- oSfnd dky esa ukjh dh lkekftd fLFkfr vkSj ikfjokfjd Hkwfedk

वैदिक समाज में नारी को परिवार और समाज की आधारशिला के रूप में प्रतिष्ठा प्राप्त थी। वेद में पत्नी को 'गृहिणी', 'सहधर्मिणी' और 'गृहलक्ष्मी' जैसे संबोधनों से विभूषित किया गया है, जो उसके सम्मानित सामाजिक स्थान को अभिव्यक्त करते हैं। परिवार रूपी संस्था में नारी को केवल आश्रित नहीं, बल्कि संचालक और संयोजक की भूमिका में देखा गया है।

शतपथ ब्राह्मण में पत्नी को पुरुष का 'अर्धांग' कहा गया है, जिससे यह स्पष्ट होता है कि गृहस्थ जीवन की पूर्णता स्त्री–पुरुष दोनों के समन्वय से ही संभव है। वैदिक गृहस्थाश्रम में पत्नी को धार्मिक, आर्थिक और सामाजिक निर्णयों में सहभागी माना गया। विवाह के समय वधू को 'सम्राज्ञी' कहकर संबोधित किया जाना इस बात का द्योतक है कि उसे परिवार में नेतृत्वकारी स्थान प्रदान किया जाता था।

अथर्ववेद में वधू के लिए यह कामना की गई है कि वह पति के घर में 'रानी' बनकर प्रतिष्ठित हो और अपने गुणों से परिवार को समृद्ध बनाए। यह उल्लेख नारी की सक्रिय और सकारात्मक पारिवारिक भूमिका को रेखांकित करता है। वह केवल संतानों की जननी ही नहीं, बल्कि परिवार के आर्थिक, नैतिक और सांस्कृतिक मूल्यों की संरक्षिका भी थी।

सामाजिक स्तर पर भी नारी को सम्मानजनक दृष्टि से देखा गया। उसे सभा और विद्वत् संवाद में भाग लेने का अवसर प्राप्त था। इस प्रकार वैदिक काल में नारी की सामाजिक स्थिति सहयोग, समता और सहभागिता के सिद्धांत पर आधारित थी, जो उसे समाज की सृजनात्मक शक्ति और पारिवारिक जीवन की केंद्र बिंदु के रूप में स्थापित करती है।

5- oSfnd lkfgR; esa ukjh&vf/kdkj] lerk vkSj ledkyhu çklafxdrk

वैदिक साहित्य में नारी को अधिकार–संपन्न और सम्मानित सामाजिक व्यक्तित्व के रूप में स्वीकार किया गया है। वेद में स्त्री को शिक्षा, वैवाहिक चयन, धार्मिक अनुष्ठान तथा सामाजिक सहभागिता के अधिकार प्रदान किए जाने के संकेत मिलते हैं। स्त्री–पुरुष को जीवन रूपी रथ के दो समान पहियों के रूप में चित्रित किया गया है, जिससे समता का सिद्धांत स्पष्ट होता है।

यजुर्वेद में स्त्री–पुरुष दोनों के शासन एवं नेतृत्व में समान अधिकार का उल्लेख मिलता है। वहीं अथर्ववेद में कन्या के ब्रह्मचर्य पालन और शिक्षा ग्रहण करने के पश्चात् विवाह की बात कही गई है, जो स्त्री की बौद्धिक स्वतंत्रता और जीवन–निर्णय के अधिकार को रेखांकित करती है। इन संदर्भों से स्पष्ट है कि वैदिक समाज में नारी को केवल पारिवारिक दायित्वों तक सीमित नहीं किया गया था, बल्कि उसे सामाजिक और बौद्धिक उन्नति का अवसर भी प्राप्त था।

यद्यपि कुछ वैदिक एवं ब्राह्मण ग्रंथों में सीमित रूप से पितृसत्तात्मक संकेत मिलते हैं, तथापि समग्र दृष्टि से नारी को सम्मान, सहयोग और प्रोत्साहन प्रदान करने की भावना प्रमुख दिखाई देती है। यही कारण है कि अनेक विद्वान वैदिक काल को नारी की स्थिति का अपेक्षाकृत उन्नत चरण मानते हैं।

समकालीन संदर्भ में वैदिक नारी की यह अवधारणा अत्यंत प्रासंगिक है। वर्तमान नारी विमर्श में शिक्षा, समान अधिकार, आत्मनिर्णय और सामाजिक सहभागिता जैसे मुद्दे प्रमुख हैं, जिनकी जड़ें वैदिक चिंतन में भी विद्यमान दिखाई देती हैं। अतः वैदिक साहित्य में नारी–अधिकार और समता की अवधारणा न केवल ऐतिहासिक अध्ययन का विषय है, बल्कि आधुनिक समाज के लिए प्रेरणास्रोत भी है।

IJARSCT
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
ISSN: 2581-9429
Volume 3, Issue 1, March 2020
Impact Factor: 4.819

fu"d"k %&

'वेदों में नारी स्वरूप' के विस्तृत अध्ययन से यह प्रतिपादित होता है कि वैदिक वाड़्मय में नारी को अत्यंत सम्मानजनक, सक्रिय और बहुआयामी स्थान प्रदान किया गया था। वेद केवल धार्मिक अनुष्ठानों के ग्रंथ नहीं हैं, बल्कि वे उस काल की सामाजिक संरचना, सांस्कृतिक मूल्यों और दार्शनिक दृष्टि के प्रामाणिक साक्ष्य भी हैं। इन ग्रंथों में नारी को गृहस्थ जीवन की केंद्रबिंदु, धार्मिक अनुष्ठानों की अनिवार्य सहभागी, तथा ज्ञान–परंपरा की संवाहक के रूप में प्रतिष्ठित किया गया है। पत्नी को 'सहधर्मिणी' तथा 'अर्धांगिनी' कहकर संबोधित करना यह सिद्ध करता है कि स्त्री और पुरुष के मध्य संबंध प्रतिस्पर्धा का नहीं, बल्कि समन्वय और समानता का था। इस प्रकार वैदिक समाज में नारी को केवल आश्रित या गौण नहीं माना गया, बल्कि उसे जीवन–व्यवस्था की अनिवार्य धुरी के रूप में स्वीकार किया गया।

विशेष रूप से ऋग्वेद में उल्लिखित ऋषिकाओं–अपाला, घोषा, लोपामुद्रा, विश्ववारा आदि – की उपस्थिति यह प्रमाणित करती है कि स्त्रियाँ वेद–मंत्रों की द्रष्टा और दार्शनिक चिंतन की अधिकारी थीं। यह स्थिति इस बात का संकेत है कि नारी को बौद्धिक और आध्यात्मिक क्षेत्र में उच्च स्थान प्राप्त था। इसी प्रकार अथर्ववेद और यजुर्वेद में स्त्रियों को शिक्षा, ब्रह्मचर्य, विवाह–निर्णय, यज्ञ तथा शासन में सहभागिता का अधिकार दिया जाना उनकी स्वतंत्रता और सम्मान का द्योतक है। विवाह के समय वधू को 'सम्राज्ञी' कहकर संबोधित करना इस बात का प्रतीक है कि उसे परिवार और समाज में नेतृत्वकारी भूमिका प्रदान की जाती थी।

दार्शनिक दृष्टि से भी वैदिक साहित्य में नारी को सृजन–शक्ति और ज्ञान की अधिष्ठात्री के रूप में चित्रित किया गया है। वृहदारण्यकोपनिषद् में वर्णित सृष्टि–विवेचन तथा स्त्री–पुरुष की समता का प्रतिपादन यह स्पष्ट करता है कि नारी को ब्रह्मविद्या और आध्यात्मिक अनुभूति का समान अधिकार प्राप्त था। देवियों–उषा, अदिति, सरस्वती–के माध्यम से नारी को प्रकाश, अनंतता और विद्या की प्रतीक शक्ति के रूप में स्थापित किया गया है। इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि वैदिक चिंतन में नारी को केवल जैविक या पारिवारिक इकाई के रूप में नहीं, बल्कि दार्शनिक और आध्यात्मिक सत्ता के रूप में स्वीकार किया गया।

यद्यपि कुछ वैदिक और ब्राह्मण ग्रंथों में सीमित रूप से पितृसत्तात्मक संकेत भी दृष्टिगोचर होते हैं, तथापि समग्र वैदिक परिप्रेक्ष्य में नारी की स्थिति सम्मानित और सशक्त प्रतीत होती है। अतः यह कहा जा सकता है कि वैदिक युग में नारी को शिक्षा, धर्म, समाज और परिवार के प्रत्येक क्षेत्र में महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त था। समकालीन नारी–विमर्श के संदर्भ में यह अध्ययन विशेष रूप से प्रासंगिक है, क्योंकि यह दर्शाता है कि समानता, शिक्षा–अधिकार और आत्मनिर्णय जैसे सिद्धांत भारतीय परंपरा में प्राचीन काल से ही विद्यमान रहे हैं। इस प्रकार 'वेदों में नारी स्वरूप' का अध्ययन न केवल ऐतिहासिक सत्य को उद्घाटित करता है, बल्कि आधुनिक समाज के लिए भी प्रेरणादायी दृष्टि प्रदान करता है।

I ndHk xzFk I ph

1. ऋग्वेद। (विभिन्न संस्करण)।

2. यजुर्वेद। (विभिन्न संस्करण)।

3. अथर्ववेद। (विभिन्न संस्करण)।

4. सामवेद। (विभिन्न संस्करण)।

5. शतपथ ब्राह्मण।

6. ऐतरेय ब्राह्मण।

IJARSCT

International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology

International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal

ISSN: 2581-9429

Volume 3, Issue 1, March 2020

Impact Factor: 4.819

7. वृहदारण्यकोपनिषद्।

8. छांदोग्य उपनिषद्।

9. मालती शर्मा, वैदिक संहिताओं में नारी।

10. माधवी शर्मा, वेदों में स्त्रीवाद।

11. ऋतु शुक्ला, वैदिक काल में नारी–अधिकार।

12. Radha Kumud Mukherjee, The Status of Women in India (m)`r)।

13. एच. सी. उपाध्याय, The Status of Women in India'

14. विमल चन्द्र पाण्डेय, प्राचीन भारत का राजनीतिक तथा सांस्कृतिक इतिहास।

15. वीरेन्द्र चन्द्र सोती, भारतीय संस्कृति के मूल तत्व।

16. संस्कारप्रकाश (यम–वीरमित्रोदय)।

17. दयानन्द सरस्वती, सत्यार्थ प्रकाश।

18. रोमिला थापर, प्राचीन भारत का इतिहास।

19. राम शरण शर्मा, प्राचीन भारत में सामाजिक संरचना।

20. डॉ. राधाकमल मुखर्जी, भारतीय संस्कृति और समाज।

Copyright to IJARSCT
www.ijarsct.co.in

ISSN
2581-9429
IJARSCT